आखर हिंदी पत्रिका; e-ISSN-2583-0597 खंड 4/अंक 2/जून 2024
Received:19/06/2024; Accepted:20/06/2024; Published:26/06/2024

साहित्य और मीडिया का अंतःसंबंध
(टेलीविजन धारावाहिकों के विशेष संदर्भ में)

- **डॉ. प्रतिभा प्रसाद**
विभागाध्यक्ष हिन्दी,
कुल्टी कॉलेज, कुल्टी,
जिला-पश्चिम बर्द्धमान, पिन–713343,
मोबाइल: 08250425011,
ई मेल : pratibhaprasad439@gmail.com

डॉ. प्रतिभा प्रसाद,**साहित्य और मीडिया का अंतःसंबंध** , आखर हिंदी पत्रिका, खंड 4/अंक 2/जून 2024, (139-148)

शोधसार – साहित्य और संचार माध्यम (मीडिया) के बीच गहरा संबंध हुआ करता है क्योंकि दोनों माध्यम ही समाज और मानव को गढ़ने का सार्थक प्रयास करते हैं। साहित्य जहाँ श्रव्य का माध्यम है, वही मीडिया विशेषकर टेलीविजन धारावाहिकों को मनोरंजन का साधन तथा दृश्य-श्रव्य काव्य के रूप में घर-घर तक पैठ बनाने का महारथ हासिल है। धरावाहिक लेखन तथा उसका प्रसारण दोनों ही इस प्रकार प्रभावोत्पादक है कि इससे समाज के बहुसंख्यक समुदाय पर व्यापक असर पड़ता है। यह संचार माध्यम मनोरंजन के साथ साहित्य की धीर, गम्भीर तथा समाज निर्माण के उद्देश्यों को पूरा करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। यह अपने विश्वव्यापी फैले दर्शकों को न सिर्फ उनकी भाषा के साहित्य से परिचय करवाता है बल्कि उन भाषाओं के भी साहित्य को रूपान्तरित कर हर समाज के लिए उसे ग्राह्य बना देता है। साहित्य के भीतर आज मीडिया की अच्छी खासी पैठ दिखी पड़ रही है वहीं मीडिया भी साहित्य के महत्व को जानकर उससे समाज निर्माण के लिए ग्रहण कर रहा है। आज जिस तरह से टी.वी चैनलों का जाल बिछ चुका है उससे साहित्य को नये सिरे से उसमें स्थान देकर समाज निर्माण की प्रक्रिया में वह शामिल हो सकता है, जैसा की 80-90 के दशक के टी.वी.

धारावाहिकों में दिखाई पड़ता था। आज भी समाज निर्माण तथा भावी पीढ़ी के निर्माण में मीडिया को साहित्य के द्वार पर जाकर उसे अपनाने का आग्रह करना होगा। तभी समाज के नव निर्माण की प्रक्रिया आरम्भ होगी।

कुंजी शब्द – संचार, अन्तर्द्वन्द्व, प्रतिपादक, असंगतियों, उर्ध्वगामी, वांछनीय, सार्वभौमिक, द्रुतगति, अग्रगण्य, दस्तावेज, मूल्यबोध, आकृष्ट।

प्रस्तावना - 'साहित्य' जीवन की सच्ची अभिव्यक्ति है। साहित्य की व्याख्या करते हुए 'हिन्दी साहित्य कोश' में वर्णित है कि साहित्य = सहित + यत् प्रत्यय; 'साहित्य' का अर्थ है शब्द और अर्थ का यथावत् सहभाव, अर्थात्, 'साथ होना'। इस प्रकार सार्थक शब्दमात्र का नाम 'साहित्य' है। .... साहित्य मनुष्य के भावों और विचारों की समष्टि है।"1 साहित्य सहभाव को महत्व देता है। 'साहित्य' शब्द का प्रचलन सातवीं-आठवीं शती से माना जाता है। उस समय साहित्य के लिए 'काव्य' शब्द का प्रयोग हुआ करता था। भामह ने शब्द और अर्थ को काव्य (साहित्य) माना। दंडी ने 'ईष्ट अर्थ से विभूषित शब्द समूह को काव्य-शरीर' कहा। आचार्य वामन ने 'गुण तथा अलंकार से संस्कारित शब्दार्थ' को साहित्य माना। राजशेखर ने 'गुण से युक्त वाक्य को काव्य' स्वीकारा, मम्मट ने 'दोष-रहित गुणों से मंडित शब्दार्थ' को काव्य माना। आचार्य विश्वनाथ ने 'रसात्मक वाक्य' को तथा पंडितराज जगन्नाथ ने 'रमणीय अर्थ के प्रतिपादक शब्द' को काव्य या साहित्य माना। किन्तु भाषा विज्ञान के नियमानुसार जब एक ही अर्थ में दो शब्दों का प्रयोग होने लगता है उनमें से किसी एक का अर्थ संकुचित या परिवर्तित हो जाता है। अतः आगे चलकर काव्य का अर्थ संकुचित हो गया, वह केवल कविता के अर्थ में प्रयुक्त होने लगा। जबकि 'साहित्य' का प्रयोग व्यापक रूप-नाटक, उपन्यास, कविता, कहानी अर्थात् कथा एवं कथेतर सभी विधाओं के लिए प्रयुक्त होने लगा। इस प्रकार 'साहित्य' शब्द 'काव्य' का उत्तराधिकारी होते हुए भी आज अधिक समृद्ध, व्यापक एवं विकसित रूप में प्रयुक्त होता है। आधुनिक समय में 'साहित्य' अंग्रेजी के 'लिटरेचर' शब्द की भाँति व्यापक रूप में ग्रहणीय है। एक समस्त प्रकार के ग्रंथ समूह के लिए और दूसरा विशेष कोटि की रचनाओं के लिए। एक का संबंध 'ज्ञान के साहित्य' से है और दूसरे का संबंध 'भावना या शक्ति के साहित्य' से।

साहित्य का समाज से घनिष्ठ संबंध है। समाज के बिना साहित्य की तथा साहित्य के बिना समाज की परिकल्पना ही नहीं की जा सकती। भारतीय साहित्य विवेचन में साहित्य को लोकोत्तर आनंद का विषय कहा है जबकि पश्चिम में साहित्य को समाज से जोड़कर उसकी अर्थवत्ता को प्रगाढ़ किया गया है। सामाजिक गतिविधियों का लोकव्यवहार पर व्यापक प्रभाव पड़ता है। क्रिस्टोफर कॉडवेल, रेल्फ फाक्स जैसे विचारकों ने साहित्य और समाज के संबंधों को व्यापकता प्रदान की है। साहित्य समाज में व्याप्त असंगतियों तथा उत्कृष्टता को एक साथ वर्णित करता चलता है। वह इस समवेत प्रवृत्तियों को उद्घाटित कर स्वस्थ समाज की संरचना करना चाहता है। ताकि इसमें निवास करने वाला मानव समाज बेहतर बन सके। प्रेमचंद के अनुसार - "साहित्य उसी रचना को कहेंगे जिसमें कोई सच्चाई प्रकट की गयी हो, जिसकी भाषा प्रौढ़, परिमार्जित एवं सुंदर हो और

जिसमें दिल और दिमाग पर असर डालने का गुण हो और साहित्य में यह गुण पूर्ण रूप से उसी अवस्था में उत्पन्न होता है, जब उसमें जीवन की सच्चाइयाँ और अनुभूतियाँ व्यक्त गयी हों।"2 साहित्य समाज तथा जीवन से जुड़कर ऐसे परिवेश की रचना करता है जिसमें जीवन की बेहतरी का भाव छिपा रहता है। जीवन की संरचना तथा जीवन के अचार-विचार की वाहक बनकर साहित्य मानव जीवन की संरचना करता है जो उसे उर्ध्वगामी बनाने में सहायक सिद्ध होता है। डॉ0 रामविलास शर्मा का मानना है कि साहित्य मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन से सम्बद्ध है। .... साहित्य विचारधारा मात्रा नहीं है। उसमें मनुष्य का इन्द्रिय-बोध, उसकी भावनाएँ आंतरिक प्रेरणाएँ भी व्यंजित होती हैं। साहित्य का यह पक्ष अपेक्षाकृत स्थायी होता है। अतः साहित्य सत्य का उद्घाटन करता है। वह मानवीय गुणों की अभिव्यक्ति करता है तथा जगत् के प्रति संवेदनात्मक बना रहा है। साहित्य संस्कार एवं सत्वृत्तियों को जन्म देने वाला होता है। वह मानव के प्रति मानव में प्रेम, सहानुभूति का संचरण करता है। साहित्य के विस्तृत क्षेत्र में जीवन जगत की सारी हलचलें निहित हुआ करती हैं।

भारतीय समाज आरम्भ से ही अपनी अनुपम संस्कृति तथा सामाजिक संरचना के लिए सम्पूर्ण विश्व के लिए आकर्षण तथा अनुकरणीय बना हुआ है। जैसे-जैसे सभ्यताएँ आगे बढ़ती रही पुरातनता के स्थान पर नूतनता ने अपनी जगह बनायी। जिससे भौगोलिक ही नहीं सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक परिवर्तन होते रहे। इन्हीं परिवर्तनों का परिणाम है कि जहाँ पहले लोग कंद-मूल, फल खाकर जीवन निर्वाह करते थे, वहीं आज भोजन के नये-नये नाम तथा उनकी कला में परिवर्तन हुए। इसी प्रकार के परिवर्तन का क्रम सभी चीजों में चलता रहा। धीरे-धीरे हम युगों, शताब्दी की सीमा लांघकर 21वीं शताब्दी में प्रवेश कर चुके हैं। आज हमारे आचार-व्यवहार से लेकर हमारे सोचने तथा समझने के दृष्टि में भी आमूलचूल परिवर्तन हुए हैं। इन्हीं परिवर्तनों में से एक परिवर्तन संचार माध्यम में होने वाले परिवर्तन हैं। यह संचार माध्यम हमारे दैनिक जीवन से इस प्रकार जुड़ा हुआ है कि हम उससे अलग होकर कुछ सोचने की स्थिति में ही नहीं हैं। यह समाज का अभिन्न संग बन गया है। आज के आधुनिक युग में जब सभ्यता अपने विकास के चरम स्थिति में है। इस आधुनिक साधन से मुँह मोड़ पाना सम्भव नहीं है। इस प्रकार साहित्य का संचार माध्यमों से अन्तःसंबंध है। एक के बिना दूसरे का विकास उस प्रकार नहीं हो सकता जैसा वांछनीय है। वांछनीयता का आशय है दोनों की सामंजस्यपूर्ण गतिविधि। साहित्य अलग से समाज का निर्माण, संस्कार तथा परिष्कार करता चलता है और संचार माध्यम अलग राह पर चलकर समाज और मनुष्य को गढ़ने का काम करता है किन्तु जब दोनों एक दूसरे से संबंध स्थापित कर समाज की निर्मित में अपना योगदान देते हैं तो वह समाज पर व्यापकता के साथ प्रभाव छोड़ने में कामयाब होता है। दोनों के संबंध को नकारा नहीं जा सकता। भले ही एक श्रव्य या आत्ममंथन का माध्यम हो और दूसरा दृश्य और श्रव्य दोनों। किन्तु दोनों आपस में मिलकर अचूक प्रभाव डालने में सक्षम सिद्ध होते हैं। कोई भी साहित्य अन्य साधनों के साथ जुड़कर जीवन को नवीन ऊर्जा से भर देता है। साहित्य, संचार माध्यमों से जुड़कर नयी अर्थवत्ता पाता है वहीं संचार के नये-नये माध्यम साहित्य से सम्पृक्त होकर उत्तरोत्तर समृद्ध होते चले जा रहे हैं। निराला इस संबंध में कहते हैं - "जिस साहित्य का संबंध सार्वभौमिक नहीं, एक दायरे में बँधा

हुआ जो अपनी ही पुरानी तान छेड़ता रहता है, अपने ही वाद्य के स्वर में मुग्ध रहता है और दूसरे देशों से पैदा हुए स्वरों और वाद्यों से सहयोग नहीं करता, उससे कुछ लेने के लायक और उसे भी कुछ देने के लायक अपने साहित्य में कुछ है या नहीं, इसकी छान-बीन नहीं करता, वह संसार की साहित्यिक मण्डली में बैठने का अधिकारी नहीं।"4 अतः साहित्य का दायरा विस्तृत होना अपेक्षित है। संचार के माध्यमों का समावेश आज के परिवेश में बढ़ता ही चला जा रहा है। दोनों ने एक दूसरे को अपनाकर अपने दायरे को विस्तार प्रदान किया है। दोनों ने ही लिखने, बोलने तथा अभिव्यक्त करने का सशक्त माध्यम बनकर आज हमारे समक्ष अपनी उपस्थिति दर्ज करवाया है। अतः इनके महत्व को नकार पाना असंभव है।

मध्यभाग - भारतवर्ष में मीडिया का विकास तीन चरणों में हुआ। सबसे पहले उन्नीसवीं सदी में औपनिवेशिक समय में विदेशी आतंक तथा असंतोष के विरुद्ध मीडिया ने अपना परचम गाड़ा। इस समय इसके दो ध्रुव थे। एक विदेशी शासक के समर्थक, दूसरा स्वतंत्रता के समर्थक। इस समय भारतीय पत्र-पत्रिकाओं का विकास हुआ, जो जन-समाज को देश की वास्तविक स्थिति तथा विद्रोह की आग सुलगाने में विशेष सहायक सिद्ध हुई। इसी समय में अंग्रेजों के नियंत्रण में रेडियो का प्रसारण आरम्भ हुआ। दूसरे दौर में आजादी मिलने के पश्चात् भारतीय समाज का द्रुतगति से विकास हुआ। हम उन नये रास्तों की ओर दौड़ पड़े जिसमें हमें बहुत पहले ही पहुँच जाना था किन्तु गुलामी की बेड़ियों ने हमें बहुत पीछे कर दिया। इसकी भरपाई इस दौर में तीव्रतम हुई। इसी समय टेलीविजन की शुरुआत हुई। इसके पश्चात् भूमण्डलीकरण के दौर मे राष्ट्र-निर्माण के लिए भारतीय समाज की स्थितियों में आमूल-चूल परिवर्तन आने शुरु हुए। रेडियो, टेलीविजन के साथ-साथ उपग्रहीय टी.वी. चैनलों की शुरुआत हुई। धीरे-धीरे मीडिया का दायरा बढ़ता गया। एफ.एम. रेडियो, टी.वी. चैनलों की बाढ़ आ गयी। 1995 में भारत में इंटरनेट की शुरुआत हुई जिससे मोबाइल फोन का प्रचलन तेजी से बढ़ा। सारी दुनिया पटने लगी। इस काल खण्ड को 'मीडियास्फेयर' नाम दिया गया। इस प्रकार हम मेघ, कबूतर, ताम्रपत्र, भोजपत्र, अभिलेख, शिलालेख, छपाई, प्रेस, रेडियो, टी.वी. से आगे बढ़ते हुए मीडिया, प्रिंट मीडिया, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया तथा सोशल मीडिया तक आगे बढ़ गये। आज फेसबुक, यूट्यूब, वीकिपीडिया, इंस्टाग्राम, व्हाटसैप, स्काईपी तक हम पहुँच चुके हैं। इन मीडिया संचालित सुविधाओं के कारण हम सरहदों की सीमा लाँघ चुके हैं। ज्ञान-विज्ञान के नये साधन अब हमारी मुट्ठी में आकर सिमट गये हैं। साहित्य की पहुंच अब घर-घर तक हो गयी है। समाज का नया स्वरूप उभरकर हमारे समक्ष आ रहा है। कविता, कहानी, शब्द चित्र, भावचित्र, पठन-पाठन की नयी तकनीक विकसित हो चुकी है। नयी-नयी साहित्यिक विधाओं ने जन्म लिया तथा पुरानी पड़ चुकी विधाओं को भी नया जीवन मिलना आरम्भ हुआ। इस मीडिया क्रांति ने जहाँ आधुनिकता के नये द्वार खोले, वहीं इसने संयुक्त परिवार तथा एकल परिवार में भी व्यक्ति को व्यक्ति से दूर करने का काम किया। आज मीडिया स्वस्थ एवं सार्थक चीजों की पहल बहुत कम करती है क्योंकि यह बाजारवाद के सिद्धांत का अनुसरण कर आगे

बढ़ रही है। इससे हमारा समाज ही नहीं साहित्य भी आहत हो रहा है। जब-जब इस मीडियाकरण के दौर में समाज की संरचना बिगड़ेगी तो समाज विकृति एवं विनाश की ओर अग्रसर होता जाएगा। अतः अब साहित्य की भूमिका काफी बढ़ जाती है कि वह समाज को इस आने वाले विनाश के प्रति आगाह करे। वह समाज को पीछे नहीं धकेलती, वह आधुनिकता से युक्त समाज को इसके खतरे से भी अवगत करने का काम करती है। इन मीडिया के साधनों ने समाज को बेहतर बनाने का भी सार्थक प्रयास किया है। इसमें उनकी भूमिका कम महत्वपूर्ण नहीं है। रेडियो, टी.वी. कम्प्यूटर, लैपटॉप, टैबलेट, फेसबुक, वीकिपीडिया, इंस्टाग्राम, ब्लॉग आदि ने साहित्य को एक नयी भावभूमि प्रदान की है जिससे साहित्य को लाभ ही पहुँचा है। इन्हीं मीडिया के संस्थानों में टेलीविजन अपना महत्व पूर्ण स्थान रखती है। रेडियो की अपेक्षा टेलीविजन का प्रभाव काफी हद तक ज्यादा पड़ा। क्योंकि रेडियो श्रव्य माध्यम है जबकि टेलीविजन श्रव्य और दृश्य दोनों है।

टेलीविजन इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की एक अभूतपूर्व क्रांति थी। इस क्रांति ने देश के जन-जन को मनोरंजन का एक ऐसा साधन प्रस्तुत किया, जो समाज को एक नयी दिशा प्रदान करने में अपनी महत्वपूर्ण और अग्रगण्य भूमिका अदा कर रही है। टेलीविजन के चैनेलों के आविष्कार के बाद यह अपनी अलग ही महत्ता प्रस्तुत करने लगी है। यही कारण है कि ऐसा कहा गया है - "यह एक ऐसा दृश्य श्रव्य माध्यम है जो सपनों में नहीं वास्तविकता में जीता है।"5 टेलीविजन का आविष्कार 1944 में अमेरिका के वैज्ञानिक जॉन लॉगी बेयर्ड ने किया। भारत में यह सर्वप्रथम 15 सितम्बर 1959 को दिल्ली में दूरदर्शन की स्थापना के साथ हुआ। टेलीविजन के प्रसारण की शुरुआत होने पर यह श्वेत-श्याम के रूप में अपनी उपस्थिति दर्ज करवाती है, फिर आगे चलकर यह रंगीन दुनिया की ओर आगे बढ़ चली। इसमें प्रसारित होने वाले दृश्य श्रव्य माध्यम के कारण लेखक की भूमिका काफी महत्वपूर्ण होती है। टेलीविजन में दूरदर्शन के माध्यम से आरम्भ होने वाले कार्यक्रम आज विभिन्न चैनलों से लबरेज है। अतः टेलीविजन के धारावाहिक लेखन की पटकथा लिखते हुए लेखक की दृष्टि काफी साफ होनी चाहिए। पहले धारावाहिक हफ्ते में एक या दो दिन प्रसारित होते थे किन्तु आज यह रोज के एपिसोड के रूप में हमारे घर में अपनी पैठ कर चुका है, जिस कारण उसे 'सोप ऑपेरा' में तब्दील होते देखते हैं। धारावाहिक सामाजिक, सांस्कृतिक, पौराणिक, तिलस्मी, जासूसी, कॉमेडी, ऐतिहासिक विभिन्न तरह के होते हैं किन्तु इनमें समाज के लिए संदेश तथा मार्गदर्शन की प्रवृत्ति होना अपेक्षित है। आज घर-घर में टी.वी. धारावाहिक के दर्शक मौजूद हैं। अतः भारतीय टेलीविजन में भारतीय समाज तथा साहित्य की पैठ आरम्भ से दिखाई देती है जिनमें गणदेवता, श्रीकांत, चरित्रहीन, मैला आँचल, रागदरबारी जैसे टी.वी. धारावाहिक विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। भारतीय. साहित्यकारों में मनोहर श्याम जोशी, कमलेश्वर, अमृतलाल नागर, प्रेमचंद जैसे महान कथाकारों ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। धारावाहिक लेखन में लेखकों की भूमिका काफी महत्वपूर्ण हुआ करती है। टेलीविजन लेखन पर विचार करते हुए कमलेश्वर कहते हैं - "मैं समझता हूँ कि लेखक के बिना टेलीविजन जैसा माध्यम नहीं चल सकता। लेकिन यह बड़ी त्रासदी है कि टेलीविजन की यहाँ लेखकों के 'ब्रांड नेम' नहीं बन

पाए।"5 इसी प्रकार मनोहर श्याम जोशी भी इस चिंता को जाहिर करते हुए कहते हैं - "टेलीविजन का माध्यम फिल्म के माध्यम की अपेक्षा बहुत अधिक शब्द प्रधान है। इसमें दिग्दर्शक कैमरामैन संपादक साउंड रिकाडिस्ट वगैरह के लिए कर दिखाने का विशेष कुछ नहीं होता। दर्शकों को बाँधे रखने का सारा दारोमदार लेखक के कलम के कमाल पर ही है। भारतीय टेलीविजन में भले ही अब तक फिल्मों की तरह निर्माता और दिग्दर्शक को ही महत्त्व दिया जा रहा हो, पश्चिम में धारावाहिक लेखन के क्षेत्र में लेखक की भूमिका की केन्द्रीय मानी जाती है। वहाँ धारावाहिकों के निर्माता अक्सर खुद लेखक ही होते हैं।"6 टेलीविजन धारावाहिक को अच्छा बनाने के लिए लेखक को अच्छे विचार तथा अच्छे संवादों का निर्माण करना होता है। यही उसकी सफलता में अपना महत्ती योगदान देते हैं। अरुण प्रकाश का मानना है कि "टेलीविजन में सिनेरियो ही सफलता की कुंजी है। ... टेलीविजन लेखन में आपको मैक्रो नहीं, माइक्रो थिंकिंग की जरूरत होती है।"7 इस समय साहित्य लेखकों ने टेलीविजन धारावाहिकों की तरफ रूखकर उसे साहित्य से जोड़ने का सार्थक एवं सफल प्रयास किया। टेलीविजन के धारावाहिक लेखन में बतौर लेखक के रूप में जुड़ने पर पटकथा में विद्वता आवश्यक है। पटकथा के दो रूप माने गये हैं – (1) कथात्मक (2) गैर कथात्मक। कथात्मक रूप में – कड़ीबद्ध धारावाहिक, सोप ऑपेरा पीरियड धारावाहिक जासूसी कथाएँ कैंपस केन्द्रित धारावाहिक, थ्रिलर, कॉमेडी धारावाहिक, मिथकीय, पौराणिक धारावाहिक टेलीफिल्म तथा गैर कथात्मक रूप में टी.वी. शो तथा समाचार हैं। इनके साथ ही धारावाहिक लेखन के मूल पाँच तत्व माने गये हैं – विचार (आइडिया), ट्रीटमेंट (दृश्यानुसार कथा), कथासार (स्टोरी आउट लाइन), चरित्र-चित्रण (कैरेक्टर), संवाद (डायलॉग)। भारतीय टेलीविजन के इतिहास में आरम्भ से ही कुछ ऐसे धारावाहिक प्रसारित हुए जिन्होंने साहित्य से शक्ति अर्जित कर समाज को बनाने तथा निर्मित करने का प्रयास किया। इन धारावाहिकों में महत्वपूर्ण टी.वी. धारावाहिक हैं, जो साहित्य के द्वारा समाज का गठन करना चाहती थी जिससे समाज को सही दिशा मिले। जिनमें महत्वपूर्ण धारावाहिक हैं –

1. भारत : एक खोज – यह पं0 जवाहरलाल नेहरु की किताब 'डिस्कवरी ऑफ इंडिया' पर आधारित है। इस धारावाहिक की निर्मित जाने-माने धारावाहिक बेनेगल ने किया। 1988 में इसका प्रसारण दूरदर्शन पर हुआ। इसमें

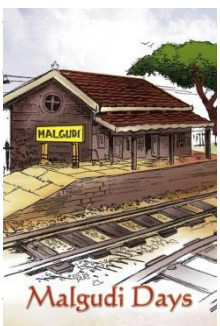

भूमिका निभाने वाले कलाकार रोशन सेठ थे। इसमें ओमपुरी, टॉम आल्टर जैसे नामी कलाकार भी शामिल थे। जिन्होंने अपने अभिनय द्वारा इस धारावाहिक को यादगार बनाया। यह 53 एपिसोड में लिखा गया धारावाहिक था, जिसमें सिन्धु घाटी सभ्यता से लेकर स्वतंत्रता आंदोलन तक के इतिहास का दस्तावेज मौजूद है।

2. मालगुड़ी डेज – यह धारावाहिक 1986 में दूरदर्शन पर 139 एपिसोड में प्रसारित हुआ। यह आर. के. नारायण की रचना पर आधारित धारावाहिक है जो शंकर नाग के निर्देशन में निर्मित हु आ। इस धारावाहिक का बच्चों पर गहरा प्रभाव पड़ा। इसमें "वेंडर ऑफ स्वीट्स" मिठाई विक्रेता जगन की कहानी है जो विदेश से लौटे अपने बेटे के साथ सामंजस्य बिठाना चाहता है। गिरीश कर्नाड अभिनीत 'स्वामी एण्ड फ्रेंड्स' कहानी दस बरस के स्वामीनाथन की कहानी है।

3. नीम का पेड़ – यह विलायत जाफरी की लघु कथा पर आधारित धारावाहिक है। इसमें संवाद राही मासूम रज़ा ने लिखे हैं। इसका प्रसारण 1991 में शुरु हुआ। यह पंकज कपूर अभिनीत अद्भुत धारावाहिक है, जिसमें बंधुआ मजदूर बुधईराम का अत्यन्त ही विशद चित्रण मिलता है। कहानी स्वतंत्रता पूर्व से शुरु होकर स्वतंत्रता बाद तक चलती रहती है। इसका टाइटल साँग निदा फाजली ने लिखा है। यह 59 एपिसोड का अत्यन्त ही लोकप्रिय धारावाहिक है।

4. तमस – यह भीष्म साहनी के उपन्यास 1986 में गोविन्द निहलानी के निर्देशन में बनी। यह धारावाहिक-दूरदर्शन पर प्रसारित पंजाब के परिवेश पर आधारित है। 1947 के विभाजित भारत की तस्वीर है। इसकी कथा पाँच दिनों को केन्द्र कर लिखी गयी है। किन्तु इसे देखने पर सौ वर्षों के हिन्दुस्तान की कथा का चित्र खींचा दिखता है। इसमें विभाजन की त्रासदी को दर्शाया गया है।
5. चरित्रहीन – यह शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय की रचना पर आधारित टी.वी धारावाहिक है। इसमें तत्कालीन समाज का चित्रण मिलता है। पश्चिमी सोच के बंगाली समाज के अन्तर्द्वन्द्व को भी उभारा गया है। यह 72 एपिसोड का धारावाहिक है।

6. वागले की दुनिया – 1988 से 1990 के दौरान यह धारावाहिक दूरदर्शन पर प्रसारित हुई। यह हास्य धारावाहिक होने का श्रेय पाती है। यह जाने-माने कार्टूनिस्ट आर. के. लक्ष्मण द्वारा रचित है। यह आम आदमी की समस्याओं को उठाने वाला अत्यन्त ही लोकप्रिय धारावाहिक रही है।

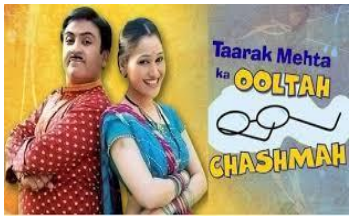

7. राग दरबारी – यह सुप्रसिद्ध कथाकार श्रीलाल शुक्ल के महत्वपूर्ण उपन्यास पर आधारित है। इसकी कथा वस्तु अत्यन्त ही लोकप्रिय रही। यह 1986 से 1987 तक चलने वाला धारावाहिक है।
8. पापड़पोल – यह शहाबुद्दीन राठौड़ की रंगीन दुनिया पर आधारित धारावाहिक है। इसमें हास्य-व्यंग्य के माध्यम से सामाजिक जीवन के विभिन्न पहलुओं को उठाया गया है।

9. लापतागंज – प्रसिद्ध व्यंग्यकार शरद जोशी के व्यंग्य पर आधारित है। यह 86 एपिसोड का लोकप्रिय धारावाहिक है। इसके निर्देशक धरम वर्मा जी हैं। यह सब टी.वी पर आने वाला धारावाहिक है जो 26 अक्टूबर 2009 से 15 अगस्त 2014 तक चला। यह शरद जोशी के कहानी पर आधारित है। इसमें रोहिताश्व गौड़, सुचेता खन्ना, अब्बास खान प्रमुख कलाकार हैं। यह कहानी छोटे से एक गाँव लापतागंज की है। यह प्रतिदिन की कहानी है।

10. तारक मेहता का उल्टा चश्मा – यह गुजराती पत्रकार एवं स्तम्भ लेखक तारक मेहता की कृतियों पर आधारित है। यह हर्षद जोशी, मालव राजदा और धर्मेश मेहता के निर्देशन में बनी धारावाहिक है। इसकी शुरुआत 2008 शुरु हुआ। यह 2250 एपिसोड का अत्यन्त ही प्रभावशाली एवं शिक्षाप्रद धारावाहिक है।
11. अलिफ लैला – यह अरबी साहित्य की रचना है। भारतीयों के बीच यह काफी लोकप्रिय हुई। 'वन थाउजेंड वन नाइट' पर

आधारित है। यह 1994 में प्रसारित महत्वपूर्ण धारावाहिक है। इसके निर्देशक आनंद सागर, प्रेमसागर और मोती सागर हैं।

12. व्योमकेश बक्षी - शार्दिंदु बंद्योपाध्याय की रचना पर आधारित है।। इस धारावाहिक ने व्योमकेश बक्षी के माध्यम से एक इतिहास स्थापित किया है। यह जासूसी धारावाहिक है।
13. चंद्रकांता – यह 1994 में विजयगढ़ की राजकुमारी तथा वीरेन्द्र सिंह की प्रेम कहानी पर आधारित अत्यंत ही लोकप्रिय धारावाहिक है। यह देवकीनंदन के उपन्यास पर आधारित है। इसका अंतिम एपिसोड 1996 में आया था।

इसके अतिरिक्त इस प्रकार धारावाहिकों ने साहित्य को आज फिर भारतीय जनमानस पर अपना महत्वपूर्ण प्रभाव छोड़ा। इसके अतिरिक्त ऐतिहासिक धारावाहिकों में चक्रवर्ती अशोक, पेशवा बाजीराव, झाँसी की रानी, टीपू सुल्तान, चन्द्रगुप्त मौर्य, विक्रम बैताल प्रमुख है। पौराणिक कथाओं में रामायण, महाभारत, कृष्णा, देवों के देव महादेव, हनुमान, संतोषी माता, महाकाली, गणेश, शनि आदि महत्वपूर्ण हैं।

निष्कर्ष – इस प्रकार निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि साहित्य ने काफी हद तक धारावाहिकों में अपनी उपस्थिति दर्ज करवाई है। दूरदर्शन के आरम्भ होने पर टी.वी. धारावाहिक साहित्य के नैतिक, सामाजिक, राजनैतिक तथा सांस्कृतिक मूल्यों को अपनाकर समाज को सही दिशा प्रदान करने की पहल करता हुआ दिखा। यही कारण है हिन्दी तथा दूसरी भाषा के साहित्यकारों ने इस संचार माध्यम से जुड़कर इससे समाज को निर्मित करने का प्रयास किया किन्तु धीरे-धीरे चैनलों के विस्तार ने इस मूल्यबोध को कम कर दिया।

धारावाहिकों की बाढ़-सी आ गयी जिसमें सामाजिक, पौराणिक, धार्मिक, जासूसी, गीतपरक अनेकों साधनों का एक साथ प्रसारण होना आरम्भ हुआ। आधुनिकता के नाम पर सास-बहू के सीरियलों ने अपनी पहुँच घर के चारदिवारी के भीतर कर ली। साहित्य के कठोर यथार्थ मन को बाँधने रखने में असमर्थ होने लगे। इसका यह दु:परिणाम हुआ कि संयुक्त परिवार की जगह एकल परिवार की जटिलताएँ बढ़ने लगीं। बच्चों के अलग से कार्टून चैनल खोल दिए गए। सबकी दुनिया अलग-अलग गढ़ दी गयी। अब एक ही परिवार के व्यक्ति अलग-अलग टी.वी. चैनल तथा धारावाहिकों के प्रति आकृष्ट होने लगे। इस गहराई को पाटने के लिए फिर से साहित्य की ओर बढ़ना होगा, तभी समाज निर्मित हो सकेगा।

सहायक संदर्भ सूची:

1. सं. वर्मा, धीरेन्द्र (प्रधान संपादक) – हिन्दी साहित्य कोश (भाग-1) पारिभाषिक शब्दावली, प्रकाशन-ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी-1, सं0-2005, पृ0-764

2. प्रेमचंद - साहित्य का उद्देश्य, प्रकाशन-भार्गव प्रेस, इलाहाबाद, सं0-1954, पृ0-1
3. शर्मा, रामविलास – परम्परा का मूल्यांकन, प्रकाशन-राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0, सं0-2004, पृ0-11
4. सं0 नवल, नंदकिशोर – निराला रचनावली, प्रकाशन- राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0, सं0-2014, पृ0-465
5. वजाहत, असगर – टेलीविजन लेखन, प्रकाशन – राधाकृष्ण प्रकाशन, प्रा0 लि0, सं0-2018, पृ9-71
6. वही, पृ0-77
7. वही, पृ0-92

****